नव-वामपंथी कविताओं में अभिव्यक्त राजनीतिक व्यंग्य

बैजु के.
शोध छात्र, हिंदी विभाग
कोच्चिन विश्वविद्यालय,
कोच्चि, केरला
shyjukas@gmail.com

परिवर्तन प्रकृति का अटूट नियम है जिस तरह से समाज में परिवर्तन होता है, उसी तरह साहित्य में भी परिवर्तन आवश्यक है। साहित्य में यदि परिवर्तन नहीं आया तो वह रसहीन हो जाएगा। अतः यही कारण है कि साहित्य में परिवर्तन समयानुरूप होना अनिवार्य है। साहित्य के सभी विधाओं में काव्य को अत्यंत सशक्त विधा माना जाता है, कारण मानव जीवन के आशा-आकांक्षा संस्कार, आचार-व्यवहार और समस्या आदि की यथावत् अभिव्यक्ति काव्य में ही संभव होती है। प्राचीन काल में ही आचार्य मम्मट ने कहा था-

"काव्यं यशसे अर्थकृते
व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये
सद्य: परनिर्वृतये
कान्तासम्मित्तयोपदेशयूजे"

(काव्य यश और धन के लिए होता है। इससे लोग-व्यवहार की शिक्षा मिलती है। अमंगल दूर हो जाता है। काव्य से परम शांति मिलती है। कविता से उपदेश ग्रहण करने का अवसर मिलता है।)

वामपंथी कविता की तरह, नव-वामपंथी कविता को दर्शन की शाखा के रूप में देखा जाता है। कभी-कभी नव-वामपंथी कविता मार्क्सवादी सच्चाई की कुछ विचारधाराओं के प्रति एक प्रकार का विरोध करता है। समाज की चुनौतियों का सामना करने के लिए नव-वामपंथी कवि जब राजनीतिक व्यंग्य और प्रतिरोध को एक शस्त्र के रूप में प्रयुक्त करता है तो उसका उद्देश्य समाज की जड़ता और विकास की गति अवरुद्ध करनेवाली परंपरा की परतों को उखाड़कर फेंकना ही है।

इंसान को इंसान की तरह छींक आने की भी याद दिलाने के दिन आ गए हैं। यह वहीं ढुलमुल नीतिवाले, कुत्सित आचरण धारी राजनेता हैं, जिन्होंने मानव मूल्यों को विरूपित किया है। आजकल ज़माने के साँप सड़कों पर निडर घूम रहे हैं और राजनैतिक साँपों के दंश से भयभीत मानवता अंधेरे में दुबकी पड़ी है। बाबा नागार्जुन ने पहले लिखा था –"लोक सभा के गलियारे में घुस आए हैं प्रेत"।

अरुण कमल प्रमुख नव-वामपंथी कवि है जिन्होंने राजनीतिक व्यंग्य को बड़ी प्रखरता से अपने काव्य में वाणी दी है। कमल जी लोकतंत्र के नाम पर नेताओं के अत्याचारों को और उनकी राष्ट्र विरोधी गतिविधियों को अपनी रचनाओं में प्रत्यक्ष ढंग से उद्घाटित करते है। सत्ता की नियति, चालबाजियाँ और उसके जनविरोधी फैसले 'घोषणा' नामक कविता में अंकित है-

"राजा चुपके से काटता है चक्कर रात में
नये-नये भेस में अलग-अलग घात में
जो सोए उनके माथे से तकिया खिंचता
फेंकता खलिहान में लुकटी"[1]

वर्तमान स्थिति ऐसी ही है और आनेवाली सदी में यदि परिवर्तन हुआ तो ठीक है किन्तु राजनेताओं के कर्मों से पता चलता है कि वे बदलने का नाम ही नहीं ले रहे हैं। संसद अपने लाभ के लिए और निजी स्वार्थ के लिए आए दिन संविधान संशोधन करती रहती है। कवि संविधान की उस संशोधन की ओर व्यंग्यात्मक लहजे में इशारा करता है जिसके बाद किसी संशोधन की आवश्यकता होगी ही नहीं। पक्ष और विपक्ष, न्याय और अन्याय आदि का स्वरूप व्यक्ति-व्यक्ति के चिंतन के भेद से ग्रहण करते हैं। एक पक्ष जिसे न्याय कहता है दूसरे पक्ष की दृष्टि से वह अन्याय हो सकता है। सिक्के का एक ही पहलू होगा तो न्याय और अन्याय का भेद ही समाप्त होगा और सत्ता जिसे न्याय कहेगी वह न्याय होगा।

नव-वामपंथी कविता निर्बलों की कविता है। निर्बलों के असंतोष, आक्रोष, व्यंग्य, भर्त्सना, विद्रूप और प्रतिरोध की कविता है। उसमें इस महादेश के सभी निर्बलों, लेकिन मानव प्रेम, मानव प्रगति और मानव न्याय के प्रतिबद्ध और शोषितों के पक्षधर व्यक्तियों का क्रोधवेश और विद्रोहवेश है।

नव-वामपंथी कविता में कवियों का राजनीति से जो रिश्ता बना है, वह इसलिए क्योंकि राजनीति मनुष्य के जीवन को व्यापक रूप से प्रभावित करती है। यह कविता अमानवीयता के विरोध में तथा मानवीय जीवन के पक्ष में खड़ी होती है। उसके केंद्र में मनुष्य की पीड़ा और पीड़ा के कारणों को जानते हुए ही हम उसका राजनीतिक आशय समझ सकते हैं। समकालीन राजनीति नव-वामपंथी कविता का मुख्य विषय है क्योंकि उससे मानवीय जीवन प्रभावित होता है और मनुष्य जीवन की समस्याओं, दैनिक आवश्यकताओं, संघर्षों का संसार ही नव-वामपंथी कविता का काव्य संसार है। चंद्रकान्त देवताले की "थोड़े से बच्चे और

बाकी बच्चे" शीर्षक कविता में हमारे समाज में दो भिन्न दुनियाओं के बच्चों के जीवन के अंतर्विरोधों को देखा गया है-

"बच्चों के हाथ से छूटकर
नहीं गिरा होता सड़क पर
तो यह कैसे पता चलता है कि उसमें
चार रूसी रोटियों के साथ
प्याज की एक गांठ
और दो हरी मिर्ची भी थीं "[2]

रोटी की राजनीति के से लेकर दल-बदल की राजनीति तक उनकी कविता का विषय है। इस देश में राजनीति, शिखण्डियों का व्यवसाय हो चुकी है। जनतंत्र की दुर्दशा राजनीतिज्ञों ने ही की है। मोह की राजनीति ने सारे माहौल को गंदा बना दिया है। नव-वामपंथी कविता इस गन्दगी को दूर करना चाहती है। नव-वामपंथी कविता का प्रमुख स्वर प्रतिरोध है। इस प्रतिरोध का मूल कारण भारतीय परिवेश और कुछ अन्तरराष्ट्रीय चेतना से जुड़ते हैं। भारतीय परिवेश की विसंगतियाँ प्रमुखत: सामाजिक आर्थिक और राजनीति जन्य है। स्वाधीनता के बाद सरकारों ने जो नारे उछाले, पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारूप, तत्संबंधी लंबे-चौड़े वायदों और वक्तव्यों का जो कुहासा उठाया था, उससे जनता की हालत में कोई अंतर नहीं आया। विज्ञान की भयावह और विध्वंसक शक्ति, मानवीय सत्ता का संकुचन, अधिनायकवादी संगठनों का बोलबाला, पूँजीवादी व्यवस्था के दुष्परिणाम, अस्तित्ववाद के प्रति सजगता और आधुनिक सभ्यता के अभिशाप आदि ऐसे कारण हैं, जिनसे युवा पीढ़ी विक्षुब्ध हो उठी है। परिवेशजन्य दबावों से उभरे विद्रोह ने हिंदी की समकालीन कविता में कई रूप धारण किए। नव-वामपंथी कवि सामाजिक बदलाव के कवि हैं।

"सिर्फ एक लावा
जो कुर्सियों के आस पास फूटेगा
नक्शा बदलने के लिए
इतना काफी है"[3]

अब उड़ने की दिशा और बुनने की क्रिया में बस ज़रा-सा अंतर रह गया है। यह कविता आज की व्यवस्था की सामाजिक-राजनीतिक भाव-भूमि को बहुत अच्छी तरह से स्पष्ट करती है।

"भेडियो से फिर कहा गया है
अपने जबड़ों को खुला रखे
यह सारा देश
उसमें झाँककर देखना चाहता है
अपना चेहरा

अपनी आँखें
अपना ललाट"[4]

वर्ग-भेदवाले समाज में चुनाव पूरी तरह जनतांत्रिक हो नहीं सकता, लेकिन जनतंत्र में चुनाव कराते रखना एक संवैधानिक जरूरत होती होती है। केदार जी इस चुनाव को नरभक्षी, भेडियो के मुंह में, "जो कि पूँजीवादी व्यवस्था का प्रतीक है" जनता का झाँकना कहते है। आज की कविता की पहचान इस बात से भी की जा सकती है कि कवि किस सीमा तक राजनीति और राजनीतिक दलों से प्रभावित है। उसकी आस्था किसी भी दल पर नहीं टिकती। वह अपने मताधिकार के प्रति अनास्था हो उठा है। आज का रचनाकार क्रांतिकारी है। भावना और शिल्प दोनों ही स्तरों पर यह व्यक्त होता है। नव-वामपंथी कवि कुमार अंबुज की कविता में भी राजनीति है। राजनीति और राजनीतिज्ञों के प्रति विमुखता, उपेक्षा और मज़ाक कविता में लक्षित होते है। 'राजनीति : कुछ रचनाएँ' कविता में राजनेता की हँसी उड़ाते हुए तिरस्कार की तीखी व्यंजना है :-

"राजनीति के पुरोधा के भाषण
और एक शराबी की कै का रंग
एक जैसा है"[5]

नव-वामपंथी कविता की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसने कभी अपने समय से कटता नहीं है कटी हुई पतंग की स्थिति में रचनाकार बिल्कुल भी नहीं है। नव-वामपंथी कविता सही मायने में विश्व पीड़ा को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्ति देता है।

आज का राजनीतिज्ञ अबौधिक है। हिंदी के साहित्यकार राजनीति से सन्यास तो नहीं लेता, किन्तु आज की वैज्ञानिक एवं तकनीकी आकांक्षा और साहित्य के आंतरिक अनुशासन का समन्वय अवश्य उपस्थित करना चाहता है। सामायिक साहित्य में मनुष्य के पतन और अंधकारमय भविष्य के चित्र भले ही प्रस्तुत किए गए मिलते हो, किंतु इससे बिल्कुल ही आशा खो बैठने का जन्म नहीं होता। आज के जीवन में जो कटुता है, अशांति और विद्रोह है, अनास्था और संघर्ष है, वह एक नए युग की प्रसव पीड़ा के रूप में है। यहाँ राजनीतिक विसंगतियों का ऐसा व्यंग्यपरक खाका है, जो मन को छीलता है चूसता है। नव-वामपंथी कवियों में विद्रोह का नकली बाना न होकर संवेदनाओं और धड़कनों की सही पकड़ है। सामयिक विसंगतियों ने इस काल की कविता के विद्रोह तत्व को अर्थवत्ता दी है।

समकालीन काव्य संसार को प्रभावित करने वाली तमाम इकाइयों में राजनीति सबसे महत्वपूर्ण है। राजनीति के अभाव में आज किसी भी गतिविधि की कल्पना नहीं की जा सकती। भारतीय सामाजिक व्यवस्था की सबसे महत्वपूर्ण इकाई के रूप में राजनीति का हस्तक्षेप बहुत व्यापक और प्रभावक है।

आज के युग में कवि और राजनीति एक ही हैं, दोनों में कोई फर्क नहीं। नव-वामपंथी कविता के केंद्र में समकालीन राजनीति एक प्रवृत्ति के रूप में उभर कर सामने आ जाती है। अपने पूर्वकालीन कविता से कहीं अधिक प्रभावी और प्रामाणिक रूप से नव-वामपंथी कविता अपने काल की राजनीति से जुड़ती है।

राजनैतिक विचारधाराओं की असफलता के साथ साथ राजनैतिक प्रणालियों की सीमायेँ भी इस काल में सामने आई हैं। कवियों और कलाकारों के पास अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और चिंतन की स्वतन्त्रता ही ऐसा माध्यम है जिससे वह राजनीति में व्यक्त भ्रष्टाचार अनैतिक स्वार्थ लिप्सा का उद्घाटन कर पाता है। न्याय की समता के द्वारा अधिकार और कर्तव्य का समुचित निर्धारण करने में सहायता मिलती है। नव-वामपंथी कवियों ने इन सत्यों का व्यापक समर्थन किया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. अरुण कमल - घोषणा पृ.33
2. चंद्रकांत देवताले - उसके सपने पृ.28
3. लीलाधर जगूड़ी - इस व्यवस्था में पृ.32
4. केदारनाथ सिंह - पहली कविता पृ.32
5. कुमार अंबुज - राजनीति कुछ रचनाएं – पृ. 66